दिल्ली पट्टके मूलसंघीय भट्टारक प्रभाचन्द्र और पद्मनन्दि

पं० परमानन्द जैन शास्त्री

प्रभाचन्द्र नामके अनेक विद्वान् हो गये हैं। एक नामके अनेक विद्वानोंका होना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। जैन साहित्य और इतिहासको देखनेसे इस बातका स्पष्ट पता चल जाता है कि एक नामके अनेक आचार्य विद्वान् और भट्टारक हो गये हैं। यहाँ दिल्ली पट्टके मूलसंघीय भट्टारक प्रभाचन्द्रके सम्बन्धमें विचार करना इस लेखका प्रमुख विषय है।

पट्टे श्रीरत्नकीर्त्तेरनुपमतपसः पूज्यपादीयशास्त्र-
व्याख्या विख्यातकीर्तिगुणगणनिधिपः सत्क्रियाचारुचंचुः ॥
श्रीमानानन्दधामा प्रति बुधनुतमामान संदायि वादो
जीयादाचन्द्रतारं नरपतिविदितः श्रीप्रभाचन्द्रदेवः ॥

(—जैन सि० भा० भाग १ किरण ४)

पट्टावलीके इस पद्यसे प्रकट है कि भट्टारक प्रभाचन्द्र रत्नकीर्ति भट्टारकके पट्टपर प्रतिष्ठित हुए थे। रत्नकीर्ति अजमेर पट्टके भट्टारक थे। दूसरी पट्टावलीमें दिल्ली पट्टपर भ० प्रभाचन्द्रके प्रतिष्ठित होनेका समय सं० १३१० बतलाया है और पट्टकाल सं० १३१० से १३८५ तक दिया है, जो ७५ वर्षके लगभग बैठता है। दूसरी पट्टावलीमें सं० १३१० पौष सुदी १५ प्रभाचन्द्रजी गृहस्थ वर्ष १२ दीक्षा वर्ष १२ पट्ट वर्ष ७४ मास ११ दिवस २३। (भट्टारक सम्प्रदाय पृ० ९१)

भट्टारक प्रभाचन्द्र जब भ० रत्नकीर्तिके पट्टपर प्रतिष्ठित हुए उस समय दिल्लीमें किसका राज्य था, इसका उक्त पट्टावलियोंमें कोई उल्लेख नहीं है। किन्तु भ० प्रभाचन्द्रके शिष्य धनपालके तथा दूसरे शिष्य ब्रह्म नाथूरामके सं० १४५४ और १४१६ के उल्लेखोंसे ज्ञात होता है कि प्रभाचन्द्रने मुहम्मद बिन तुगलकके मनको अनुरंजित किया था और वादीजनोंको वादमें परास्त किया था—जैसा कि उनके निम्न वाक्योंसे प्रकट है—

'तहिं भव्वहि सुमहोच्छव विहियड, सिरिरयणकित्ति पट्टेणिहियउ।
महमंद साहि मणु रंजियउ, विज्जहि वाइय मणु भंजियउ॥

—बाहुबलिचरित प्रशस्ति

उस समय दिल्लीके भव्यजनोंने एक उत्सव किया था। मुहम्मद बिन तुगलकने सन् १३२५ (वि० सं० १३८२) से सन् १३५१ (वि० सं० १४०८) तक राज्य किया है। यह बादशाह बहुभाषाविज्ञ, न्यायी, विद्वानोंका समादर करनेवाला और अत्यन्त कठोर शासक था। अतः प्रभाचन्द्र इसके राज्यमें सं० १३८५ के लगभग पट्टपर प्रतिष्ठित हुए हों। इस कथनसे पट्टावलियोंका वह समय कुछ आनुमानिक सा जान पड़ता है। वह इतिहासकी कसौटीपर ठीक नहीं बैठता। अन्य किसी प्रमाणसे भी उसकी पुष्टि नहीं होती।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रभाचन्द्र अपने अनेक शिष्योंके साथ पट्टण, खंभात, धारानगर और देवगिरि होते हुए जोयणिपुर (दिल्ली) पधारे थे। जैसा कि उनके शिष्य धनपालके निम्न उल्लेखसे स्पष्ट है—

पट्टणे खंभायच्चे धारणयरि देवगिरि।
मिच्छामय विहुणंतु गणि पत्तउ जोयणपुरि॥ —बाहुबलिचरिउ प्र०

आराधना पंजिकाके सं० १४१६ के उल्लेखसे स्पष्ट है कि वे भ० रत्नकीर्तिके पट्टको सजीव बना रहे थे।[1] इतना ही नहीं, किन्तु जहाँ वे अच्छे विद्वान्, टीकाकार, व्याख्याता और मंत्र-तंत्रवादी थे, वहाँ वे प्रभावक व्यक्तित्वके धारक भी थे। उनके अनेक शिष्य थे। उन्होंने फीरोजशाह तुगलकके अनुरोधपर रक्ताम्बर वस्त्र धारण कर अन्तःपुरमें दर्शन दिये थे। उस समय दिल्लीके लोगोंने यह प्रतिज्ञा की थी कि हम आपको सवस्त्रजती मानेंगे। इस घटनाका उल्लेख बखतावरशाहने अपने बुद्धिविलासके निम्न पद्यमें किया है—

'दिल्लीके पातिसाहि भये पेरोजसाहि जब।
चांदो साह प्रधान भट्टारक प्रभाचन्द्र तब॥
आणे दिल्ली मांझि वाद जीते विद्यावर।
साहि रीझिकैं कही करै दरसन अंतःपुर॥
तिहि समै लंगोट लिवाय पुनि चाँद विनती उच्चरी।
मानिहैं जती जुत वस्त्र हमसब श्रावक सौगंद करी॥'६१६

यह घटना फीरोजशाहके राज्यकालकी है, फीरोजशाहका राज्य सं० १४०८ से १४४५ तक रहा है। इस घटनाको विद्वज्जन बोधकमें सं० १३०५ की बतलाया है जो एक स्थूल भूलका परिणाम जान पड़ता है; क्योंकि उस समय तो फीरोजसाह तुगलकका राज्य नहीं था, फिर उसकी संगति कैसे बैठ सकती है। कहा जाता है कि भ० प्रभाचन्दने वस्त्र धारण करनेके बादमें प्रायश्चित्त लेकर उनका परित्याग कर दिया था, किन्तु फिर भी वस्त्र धारण करनेकी परम्परा चालू हो गयी।

इसी तरह अनेक घटना क्रमोंमें समयादिकी गड़बड़ी तथा उन्हें बढ़ा-चढ़ाकर लिखनेका रिवाज भी हो गया था।

दिल्लीमें अलाउद्दीन खिलजीके समय स्थित राघो चेतनके समय घटने वाली घटनाको ऐतिहासिक दृष्टिसे विचार किये बिना ही उसे फीरोजसाह तुगलकके समयकी घटित बतला दिया गया है। (देखो, बुद्धि विलास पृष्ठ ७६) और महावीर जयन्ती स्मारिका अप्रैल १९६२ का अंक पृ० १२८)।

---

१. सं० १४१६ चैत्र सुदी पंचम्यां सोमवासरे सकलराजशिरोमुकुटमाणिक्यमरीचिपिंजरीकृतचरणकमलपादपीठस्य श्री पेरोजसाहेः सकलसाम्राज्यधुरीविभ्राणस्य समये श्री दिल्यां श्री कुन्दकुन्दाचार्यान्वये सरस्वतीगच्छे बलात्कारगणे भ० श्री रत्नकीर्तिदेवपट्टोदयाद्रि तरुणतरणित्वमुर्वी कुर्वाणे भट्टारक श्री प्रभाचन्द्रदेव तत्शिष्याणां ब्रह्म नाथूराम इत्याराधना पंजिकायां ग्रन्थ आत्य पठनार्थे लिखापितम।

दूसरी प्रशस्ति सं० १४१६ भादवो सुदी १३ गुरुवारके दिन लिखी हुई ब्रह्मदेव कृत द्रव्यसंग्रह टीकाकी है, जो जयपुरके ठोलियोंके मन्दिरके शास्त्र भंडारमें सुरक्षित है। ग्रन्थ-सूची भाग ३ पृ० १८०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यद्यपि राघोचेतन ऐतिहासिक व्यक्ति हैं और अलाउद्दीन खिलजीके समय हुए हैं। यह व्यास जातिके विद्वान्, मंत्र-तंत्रवादी और नास्तिक थे। धर्मपर इनकी कोई आस्था नहीं थी, इनका विवाद मुनि महासेनसे हुआ था, उसमें यह पराजित हुए थे।

ऐसी ही घटना जिनप्रभसूरि नामक श्वेताम्बर विद्वान्के सम्बन्धमें कही जाती है—एक बार सम्राट् मुहम्मदशाह तुग़लककी सेवामें काशीसे चतुर्दश विद्या निपुण मंत्र-तंत्रज्ञ राघव चेतन नामक विद्वान् आया। उसने अपनी चातुरीसे सम्राट्को अनुरंजिन कर लिया। सम्राट्पर जैनाचार्य श्रीजिनप्रभसूरिका प्रभाव उसे बहुत अखरता था। अतः उन्हें दोषी ठहराकर उनका प्रभाव कम करनेके लिए सम्राट्की मुद्रिकाका अपहरण कर सूरिजीके रजोहरणमें प्रच्छन्न रूपसे डाल दी (देखो जिनप्रभसूरि चरित पृ० १२)। जबकि यह घटना अलाउद्दीन खिलजीके समयकी होनी चाहिये। इसी तरह की कुछ मिलती-जुलती घटना भ० प्रभाचन्द्रके साथ भी जोड़ दी गई है। विद्वानोंको इन घटनाचक्रोंपर खूब सावधानीसे विचार कर अन्तिम निर्णय करना चाहिये।

टीका-ग्रंथ

पट्टावलीके उक्त पद्यपरसे जिसमें यह लिखा गया है कि पूज्यपादके शास्त्रोंकी व्याख्यासे उन्हें लोकमें अच्छा यश और ख्याति मिली थी। किन्तु पूज्यपादके 'समाधितंत्र' पर तो पं० प्रभाचन्द्रकी टीका उपलब्ध है। टीका केवल शब्दार्थ मात्रको व्यक्त करती है उसमें कोई ऐसी खास विवेचना नहीं मिलती जिससे उनकी प्रसिद्धिको बल मिल सके। हो सकता है कि वह टीका इन्हीं प्रभाचन्द्रकी हो, आत्मानुशासनकी टीका भी इन्हीं प्रभाचन्द्रकी कृति जान पड़ती है, उसमें भी कोई विशेष व्याख्या उपलब्ध नहीं होती।

रही रत्नकरण्ड श्रावकाचार टीकाकी बात, सो उस टीकाका उल्लेख पं० आशाधरजीने अनगार धर्मामृतकी टीकामें किया है।

'यथाहुस्तत्र भगवन्तः श्रीमत्प्रभेन्दुपादा रत्नकरण्डटीकायां चतुरावर्तत्रितय इत्यादि सूत्रे द्विनिषद्य इत्यस्य व्याख्याने देववन्दनां कुर्वता हि प्रारम्भे समाप्तौ चोपविश्य प्रणामः कर्तव्य इति।'

इन टीकाओंपर विचार करनेसे यह बात तो सहज ही ज्ञात होती है कि इन टीकाओंका आदि-अन्त मंगल और टीकाकी प्रारंभिक सरणीमें बहुत कुछ समानता दृष्टिगोचर होती है। इससे इन टीकाओंका कर्त्ता कोई एक ही प्रभाचन्द्र होना चाहिये। हो सकता है कि टीकाकारकी पहली कृति रत्नकरण्डक टीका ही हो और शेष टीकाएँ बादमें बनी हों। पर इन टीकाओंका कर्ता पं० प्रभाचन्द्र ही है पर रत्नकरण्ड टीकाके कर्ता रक्ताम्बर प्रभाचन्द्र नहीं हो सकते। प्रमेयकमल मार्तण्डके कर्ता प्रभाचन्द्र इनके कर्ता नहीं हो सकते। क्योंकि इन टीकाओंमें विषयका चयन और भाषाका वैसा सामंजस्य अथवा उसकी वह प्रौढ़ता नहीं दिखाई देती, जो प्रमेयकमलमार्तण्ड और न्यायकुमुदचन्द्रमें दिखाई देती है। यह प्रायः सुनिश्चित-सा है कि धारावासी प्रभाचन्द्राचार्य जो माणिक्यनन्दिके शिष्य थे उक्त टीकाओंके कर्ता नहीं हो सकते।

समय-विचार

प्रभाचन्द्रका पट्टावलियोंमें जो समय दिया गया है, वह अवश्य विचारणीय है। उसमें रत्नकीर्तिके पट्टपर बैठनेका समय सं० १३१० तो चिन्तनीय है ही। सं० १४८१ के देवगढ़ वाले शिलालेखमें भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रत्नकीर्तिके पट्टपर बैठनेका उल्लेख है, पर उसके सही समयका उल्लेख नहीं है। प्रभाचन्द्रके गुरु रत्नकीर्तिका पट्टकाल पट्टावलीमें सं० १२९६-१३१० बतलाया है। यह भी ठीक नहीं जँचता, संभव है वे १४ वर्ष पट्टकालमें रहे हों। किन्तु वे अजमेर पट्टपर स्थित हुए और वहीं उनका स्वर्गवास हुआ। ऐसी स्थितिमें समयकी सीमाको कुछ और बढ़ाकर विचार करना चाहिये, यदि वह प्रमाणों आदिके आधारसे मान्य किया जाय तो उसमें १०-२५ वर्ष की वृद्धि अवश्य होनी चाहिये, जिससे समयकी संगति ठीक बैठ सके। आगे पीछेका सभी समय यदि पुष्कल प्रमाणोंकी रोशनीमें चर्चित होगा, वह प्रायः प्रामाणिक होगा। आशा है विद्वान लोग भट्टारकीय पट्टावलियोंमें दिये हुए समयपर विचार करेंगे, अन्य कोई विशेष जानकारी उपलब्ध हो तो उससे भी मुझे सूचित करेंगे।

पद्मनन्दी

सन्त पद्मनन्दि भट्टारक प्रभाचन्द्रके पट्टधर विद्वान् थे।[1] विशुद्ध सिद्धान्त रत्नाकर और प्रतिभा द्वारा प्रतिष्ठाको प्राप्त हुए थे। उनके शुद्ध हृदयमें आलिङ्गन करती हुई ज्ञानरूपी हंसी आनन्द पूर्वक क्रीड़ा करती थी, वे स्याद्वाद सिन्धुरूप अमृतके वर्धक थे।[2] उन्होंने जिन दीक्षा धारणकर जिनवाणी और पृथ्वीको पवित्र किया था। महाव्रती पुरन्दर तथा शान्तिसे रागांकुर दग्ध करने वाले वे परमहंस निर्ग्रन्थ पुरुषार्थशाली अशेष शास्त्रज्ञ सर्वहित परायण मुनिश्रेष्ठ पद्मनन्दी जयवन्त रहें।[3] इन विशेषणोंसे पद्मनन्दीकी महत्ताका सहज ही बोध हो जाता है। इनकी जाति ब्राह्मण थी। एक बार प्रतिष्ठामहोत्सवके समय व्यवस्थापक गृहस्थकी अविद्यमानतामें प्रभाचन्द्रने उस उत्सवको पट्टाभिषेकका रूप देकर पद्मनन्दीको अपने पट्टपर प्रतिष्ठित किया था। इनके पदपर प्रतिष्ठित होनेका समय पट्टावलीमें सं० १३८५ पौष शुक्ला सप्तमी बतलाया गया है। वे उस पट्टपर संवत् १४७३ तक तो आसीन रहे ही हैं। इसके अतिरिक्त और कितने समय तक रहे यह कुछ ज्ञात नहीं हुआ। और न यह ही ज्ञात हो सका कि उनका स्वर्गवास कहाँ और कब हुआ है?

कुछ विद्वानोंकी यह मान्यता है कि पद्मनन्दी भट्टारक पद पर संवत् १४६५ तक रहे हैं। इस सम्बन्धमें उन्होंने कोई पुष्ट प्रमाण तो नहीं दिया, किन्तु उनका केवल वैसा अनुमान मात्र है। अतः इस मान्यतामें कोई प्रामाणिकता नहीं जान पड़ती। क्योंकि सं० १४७३ की पद्मकीर्ति रचित पार्श्वनाथ चरितकी लिपि प्रशस्तिसे स्पष्ट जाना जाता है कि पद्मनन्दी उस समय तक पट्टपर विराजमान थे, जैसा कि प्रशस्तिके निम्नवाक्यसे प्रकट है—

---

१. श्रीमत्प्रभाचन्द्रमनीन्द्रपट्टे, शश्वत्प्रतिष्ठाप्रतिभागरिष्ठाः।
विशुद्धसिद्धान्तरहस्यरत्नरत्नाकरा नन्दतु पद्मनन्दी॥ —शुभचन्द्र पट्टावली

२. हंसो ज्ञानमरालिकासमसमाश्लेषप्रभुताद्भुतो,
नंदः क्रीडति मानसेति विशदे यस्यानिशं सर्व्वतः।
स्याद्वादामृतसिन्धुवर्धनविधोः श्रीमत्प्रभेन्दुप्रभोः,
पट्टे सूरिमतल्लिका स जयतात् श्रीपद्मनन्दी मुनिः॥ —शुभचन्द्र पट्टावली

३. महाव्रति पुरन्दरः प्रशमदग्धरागांकुरः, स्फुरत्परमपौरुषस्थिरशेषशास्त्रार्थवित्।
यशोभरमनोहरी-कृतसमस्तविश्वंभरः, परोपकृतितत्परो जयति पद्मनन्दीश्वरः॥
—श्रावकाचार सारोद्धार प्रशस्ति, जैन ग्रन्थ प्र० सं० भा० १

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'सं० १४७३ वर्षे फालग्न (लगुन) वदि ९ बुधवासरे। महाराजाधिराज श्रीवीरभान देव·····श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे नंदीसंघे—'कुन्दकुन्दाचार्यान्वये भ० श्रीरत्नकीर्तिदेवास्तेषां पट्टे भट्टारक श्रीप्रभाचन्द्रदेवास्तत्पट्टे भ० श्रीपद्मनन्दि देवास्तेषा पट्ट प्रवर्तमाने····।'

—(मुद्रित पार्श्वनाथ चरित प्रशस्ति)

इससे यह भी ज्ञात होता है कि पद्मनन्दी दीर्घजीवी थे। पट्टावलीमें उनकी आयु निन्यानवे वर्ष अट्ठाईस दिनकी बतलाई गई है। और पट्टकाल पैंसठ वर्ष आठ दिन बतलाया है।

यहाँ इतना और प्रकट कर देना उचित जान पड़ता है कि वि० सं० १४७९में असवाल कवि द्वारा रचित 'पासणाहचरिउ' में पद्मनन्दीके पट्टपर प्रतिष्ठित होनेवाले भ० शुभचन्द्रका उल्लेख निम्न वाक्योंमें किया है—'तहो पट्टंवर ससिणामें, सुहससि मुणि पयपंकयचंद हो।' चूंकि सं० १४७४में पद्मनन्दी द्वारा प्रतिष्ठित मूर्तिलेख उपलब्ध है, अतः उससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि पद्मनन्दीने सं० १४७४के बाद और सं० १४७९से पूर्व किसी समय शुभचन्द्रको अपने पट्टपर प्रतिष्ठित किया था।

कवि असवालने कुशार्त देशके करहल नगरमें सं० १४७१में होनेवाले प्रतिष्ठोत्सवका उल्लेख किया है। और पद्मनन्दीके शिष्य कवि हल्ल या जयमित्रहल तथा हरिचन्द्र द्वारा रचित 'मल्लिणाह' काव्यकी प्रशंसाका भी उल्लेख किया है। उक्त ग्रन्थ भ० पद्मनन्दीके पदपर प्रतिष्ठित रहते हुए उनके शिष्य द्वारा रचा गया था। कवि हरिचन्दने अपना वर्धमान काव्य भी लगभग उसी समय रचा था। इसीसे उसमें कविने उनका खुला यशोगान किया है:—

"पद्मणंदि मुणिणाहु गणिंदहु, चरण सरणुगुरु कइ हरिइंदहु।" (वर्धमान काव्य)

आपके अनेक शिष्य थे, जिन्हें पद्मनन्दीने स्वयं शिक्षा देकर विद्वान् बनाया था। भ० शुभचन्द्र, तो उनके पट्टधर शिष्य थे ही, किन्तु आपके अन्य तीन शिष्योंसे भट्टारक पदोंकी तीन परम्पराएँ प्रारम्भ हुई थीं, जिनका आगे शाखा-प्रशाखा रूपमें विस्तार हुआ है। भट्टारक शुभचन्द्र दिल्ली परम्पराके विद्वान् थे। इनके द्वारा 'सिद्धचक्र'की कथा रची गई है[1]। जिसे उन्होंने सम्यग्दृष्टि जालाकके लिये बनाई थी। भट्टारक सकलकीर्तिसे ईडरकी गद्दी और देवेन्द्रकीर्तिसे सूरतकी गद्दीकी स्थापना हुई थी। चूँकि पद्मनन्दी मूलसंघकी परम्पराके विद्वान् थे, अतः इनकी परम्परामें मूलसंघकी परम्पराका विस्तार हुआ। पद्मनन्दी अपने समयके अच्छे विद्वान्, विचारक और प्रभावशाली भट्टारक थे। भ० सकलकीर्तिने इनके पास आठ वर्ष रहकर धर्म, दर्शन, छन्द, काव्य, व्याकरण, कोष और साहित्यादिका ज्ञान प्राप्त किया था और कवितामें निपुणता प्राप्त की थी। भट्टारक सकलकीर्तिने अपनी रचनाओंमें उनका ससम्मान उल्लेख किया है। पद्मनन्दी केवल गद्दीधारी भट्टारक ही नहीं थे, किन्तु जैनसंस्कृतिके प्रचार प्रसारमें सदा सावधान रहते थे।

पद्मनन्दी प्रतिष्ठाचार्य भी थे। इनके द्वारा विभिन्न स्थानोंपर अनेक मूर्तियोंकी प्रतिष्ठा की गई थी। जहाँ वे मंत्र-तंत्र वादी थे, वहाँ वे अत्यन्त विवेकशील और चतुर थे। आपके द्वारा प्रतिष्ठित मूर्तियाँ विभिन्न स्थानोंके मन्दिरोंमें पाई जाती हैं। पाठकोंकी जानकारीके लिये दो मूर्ति लेख नीचे दिये जाते हैं—

---

१. राजस्थान जैन ग्रन्थ-सूची भा० ३ पृ० ८१।
श्री पद्मनन्दी मुनिराजपट्टे शुभोपदेशी शुभचन्द्रदेवः।
श्री सिद्धचक्रस्य कथाऽवतारं चकार भव्यांबुजभानुमाली (जैनग्रन्थ प्र० सं० भा० १ पृ० ८८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१. **आदिनाथ**—ओं संवत् १४५० बैशाख सुदी १२ गुरौ श्री चाहुवाणवंश कुशेशयमार्तण्ड सारवै विक्रमन्य श्रीमत स्वरूप भूपान्वय झुंडदेवात्मजस्य शुक्लस्य श्रीसुवानृपतेः राज्ये प्रवर्तमान श्रीमूलसंघे भ० श्रीप्रभाचन्द्र देव तत्पट्टे श्रीपद्मनन्दिदेव तदुपदेशे गोलाराडान्वपे·····।

—(भट्टारक सम्प्रदाय ८९२)

२. **अरहंत**—हरितवर्ण, कृष्णमूर्ति—सं० १४६३ वर्षे माघसुदी १३ शुक्ले श्रीमूलसंघे पट्टाचार्य श्रीपद्मनन्दिदेवा गोलाराडान्वये साधु नागदेव सुत·····।

—(इटावाके जैनमूर्ति लेख—प्राचीन जैनलेख सं० पृ० ३८)

ऐतिहासिक घटना

भ० पद्मनन्दीके सांनिध्यमें दिल्लीका एक संघ गिरनारजीकी यात्राको गया था। उसी समय श्वेताम्बर सम्प्रदायका भी एक संघ उक्त तीर्थकी यात्रार्थ वहाँ आया हुआ था। उस समय दोनों संघोंमें यह विवाद छिड़ गया कि पहले कौन वन्दना करे, जब विवादने तूल पकड़ लिया और कुछ भी निर्णय नहीं हो सका, तब उसके शमनार्थ यह युक्ति सोची गई कि जो संघ सरस्वतीसे अपनेको 'आद्य' कहलायेगा, वही संघ पहले यात्राको जा सकेगा। अतः भ० पद्मनन्दीने पाषाणकी सरस्वती देवीके मुखसे 'आद्य दिगम्बर' शब्द कहला दिया। परिणामस्वरूप दिगम्बरोंने पहले यात्रा की, और भगवान् नेमिनाथकी भक्तिपूर्वक पूजा की। उसके बाद श्वेताम्बर सम्प्रदायने की। उसी समयसे बलात्कारगणकी प्रसिद्धि मानी जाती है। वे पद्य इस प्रकार है—

पद्मनन्दिगुरुर्जातो बलात्कारगणाग्रणी। पाषाणघटिता येन वादिता श्रीसरस्वती॥
ऊर्जयन्तगिरौ तेन गच्छः सारस्वतोऽभवत्। अतस्तस्मै मुनीन्द्राय नमः श्रीपद्मनन्दिने॥

यह ऐतिहासिक घटना प्रस्तुत पद्मनन्दीके जीवनके साथ घटित हुई थी। पद्मनन्दी नाम साम्यके कारण कुछ विद्वानोंने इस घटनाका सम्बन्ध आचार्य प्रवर कुन्दकुन्दके साथ जोड़ दिया। वह ठीक नहीं है क्योंकि कुन्दकुन्दाचार्य मूलसंघके प्रवर्तक प्राचीन मुनिपुंगव हैं और घटनाक्रम अर्वाचीन है। ऐसी स्थितिमें यह घटना आ० कुन्दकुन्दके समयकी नहीं है। इसका सम्बन्ध तो भट्टारक पद्मनन्दीसे है।

रचनाएँ

पद्मनन्दीकी अनेक रचनाएँ हैं। जिनमें देव-शास्त्र-गुरु पूजन संस्कृत, सिद्धपूजा संस्कृत, पद्मनन्दि-श्रावकाचार सारोद्धार, वर्धमान काव्य, जीरापल्लि पार्श्वनाथ स्तोत्र और भावना चतुर्विंशति प्रधान हैं। इनके अतिरिक्त वीतरागस्तोत्र, शान्तिनाथस्तोत्र भी पद्मनन्दीकृत हैं। पर दोनों स्तोत्रों, देव-शास्त्र-गुरुपूजा, तथा सिद्धपूजामें पद्मनन्दिका नामोल्लेख तो मिलता है। जबकि अन्य रचनाओंमें भ० प्रभाचन्द्रका स्पष्ट उल्लेख है, इसलिये उन रचनाओंको बिना किसी ठोस आधारके प्रस्तुत पद्मनन्दीकी ही रचनाएँ नहीं कहा जा सकता। हो सकता है वे भी इन्हींकी कृति रही हों।

श्रावकाचार सारोद्धार संस्कृत भाषाका पद्यबद्ध ग्रन्थ है, उसमें तीन परिच्छेद हैं जिनमें श्रावक धर्मका अच्छा विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थके निर्माणमें लंबकंचुक कुलान्वयी (लमेचूवंशज) साहू वासाधर प्रेरक हैं। प्रशस्तिमें उनके पितामहका भी नामोल्लेख किया है जिन्होंने 'सूपकारसार' नामक ग्रन्थकी रचना की थी। यह ग्रन्थ अभी अनुपलब्ध है। विद्वानोंको उसका अन्वेषण करना चाहिए। इस ग्रन्थकी अन्तिम प्रशस्तिमें कर्ताने साहू वासाधरके परिवारका अच्छा परिचय कराया है। और बतलाया है कि गोकर्णके पुत्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोमदेव हुए, जो चन्द्रवाडके राजा अभयचन्द्र और जयचन्द्रके समय प्रधानमन्त्री थे। सोमदेवकी पत्नीका नाम प्रेमसिरि था, उससे सात पुत्र उत्पन्न हुए थे। वासाधर[1], हरिराज, प्रहलाद, महराज, भवराज, रत्नाख्य और सतनाख्य। इनमेंसे ज्येष्ठ पुत्र वासाधर सबसे अधिक बुद्धिमान, धर्मात्मा और कर्तव्यपरायण था। इनकी प्रेरणा और आग्रहसे मुनि पद्मनन्दीने उक्त श्रावकाचारकी रचना की थी। साहू वासाधरने चन्द्रवाडमें एक जिनमन्दिर बनवाया था और उसकी प्रतिष्ठा विधि भी सम्पन्न की थी। कवि धनपालके शब्दोंमें वासाधर सम्यग्दृष्टि, जिनचरणोंका भक्त, जैनधर्मके पालनमें तत्पर, दयालु, बहुलोक मित्र, मिथ्यात्व-रहित और विशुद्ध चित्तवाला था। भ० प्रभाचन्द्रके शिष्य धनपालने भी सं० १४५४ में चन्द्रवाड नगरमें उक्त वासाधरकी प्रेरणासे अपभ्रंश भाषामें बाहुबलीचरितकी रचना की थी।[2]

दूसरी कृति वर्धमान काव्य या जिनरात्रि कथा है, जिसके प्रथम सर्गमें ३५९ और दूसरे सर्गमें २०५ श्लोक हैं। जिनमें अन्तिम तीर्थंकर भगवान् महावीरका चरित अंकित किया गया है, किन्तु ग्रन्थमें रचनाकाल नहीं दिया जिससे उसका निश्चित समय बतलाना कठिन है। इस ग्रन्थकी एक प्रति जयपुरके पार्श्वनाथ दि० जैनमन्दिरके शास्त्र भण्डारमें अवस्थित है जिसका लिपिकाल संवत् १५१८ है और दूसरी प्रति सं० १५२२ की लिखी हुई गोपीपुरा सूरतके शास्त्रभण्डारमें सुरक्षित है। इनके अतिरिक्त 'अनन्तव्रतकथा' भी भ० प्रभाचन्द्रके शिष्य पद्मनन्दीकी बनाई उपलब्ध है। जिसमें ८५ श्लोक हैं।

पद्मनन्दीने अनेक देशों, ग्रामों, नगरों आदिमें विहारकर जनकल्याणका कार्य किया है, लोकोपयोगी साहित्यका निर्माण तथा उपदेशों द्वारा सन्मार्ग दिखलाया है। इनके शिष्य-प्रशिष्योंसे जैनधर्म और संस्कृतिकी महती सेवा हुई। वर्षोंतक साहित्यका निर्माण, शास्त्रभण्डारोंका संकलन और प्रतिष्ठादि कार्यों द्वारा जैन-संस्कृतिके प्रचारमें बल मिला है। इसी तरहके अन्य अनेक सन्त हैं जिनका परिचय भी जनसाधारणतक नहीं पहुँचा है। इसी दृष्टिकोणको सामने रखकर पद्मनन्दीका परिचय दिया गया है। चूँकि पद्मनन्दी मूल-संघके विद्वान् थे, वे दिगम्बर वेषमें रहते थे और अपनेको मुनि कहते थे। और वे यथाविधि यथाशक्य आचार विधिका पालनकर जीवनयापन करते थे। आपकी शिष्य परम्पराके अनेक विद्वानोंने जैनसाहित्यकी महान् सेवा की है। राजस्थानके शास्त्रभण्डारोंमें मुनि पद्मनन्दीके शिष्य-प्रशिष्योंकी अपभ्रंश, प्राकृत और संस्कृत, राजस्थानी-गुजराती आदिमें रची हुई अनेक कृतियाँ मिलती हैं।

---

१. श्री लम्बकंचुकुलपद्मविकासभानुः, सोमात्मजो दुरितदारुचयकृशानुः।
धर्मैकसाधनपरो भुवि भव्यबन्धुर्वासाधरो विजयते गुणरत्नसिन्धुः॥
—बाहुबलीचरित सन्धि ४

२. जिणणाहचरणभत्तो जिणधम्मपरो दयालोए।
सिरिसोमदेवतणओ णंदउ वासद्धरो णिच्चं॥
सम्मत्तजुत्तो जिणपायभत्तो दयालुरत्तो बहुलोयमित्तो।
मिच्छत्तचत्तो सुविशुद्धचित्तो वासाधरो णंदउ पुण्णचित्तो॥
—बाहुबलीचरित सन्धि ३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org